वैदिक काल में संगीत का महत्व

मीरा कुमारी
उच्चतर माध्यमिक प्रशिक्षित शिक्षिका (संगीत)

सार

वैदिक काल का आरम्भ आर्यो के आगमन से हुआ। वैदिक सभ्यता ग्रामीण सभ्यता थी। वैदिक काल को दो भागों में विभाजीत किया गया है।

1. पूर्व वैदिक काल (ऋग्वैदिक काल) –1500–1000 ई0 पूर्व
2. उत्तर वैदिक काल –1000–600 ई0 पूर्व

इस काल में सामाज में वर्ग व्यवस्था स्थापित हो गई थी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र, जिसमें सभी वर्गो को ब्राह्मणों के द्वारा ही विद्या एवं संगीत का ज्ञान दिया जाता था। उस समय स्त्रीयाँ भी खुले मंच पर अपना गायन, वादन एवं नृत्य प्रस्तुत करती थी। वैदिक काल में मुख्य रूप से वीणा वादन स्त्रीयों के द्वारा होता था। वैदिक काल में सामगान हुआ करता था। इसमें तीन स्वरों का गान सामिक कहलाता है। यज्ञों में देवताओं को आमंत्रित करने के लिए सामगायन मुख्य रूप से होती थी।

मुख्य बिंदु :– (1) सामिक गान
(2) मिश्रतयथेष्ट
(3) अश्वमेघ यज्ञ
(4) अनुशीलन
(5) शतपथ ब्राह्मण
(6) परिगणित
(7) उद्गाता

परिचय :– वैदिक काल का आरम्भ आर्यो के आगमन से हुआ है। वैदिक सभ्यता ग्रामीण सभ्यता थी इसको दो भागों में विभाजित किया गया है।

1. पूर्व वैदिक काल (ऋग्वैदिक काल)–1500–1000 ई0 पूर्व
2. उत्तर वैदिक काल –1000–600 ई0 पूर्व

वैदिक काल में वर्ग व्यवस्था लागू हो गई थी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र नामक वर्ग स्थापित हो गये थे। इस चारों वर्गो में सबसे ऊपर ब्राह्मणों का अस्तित्व था। यही वर्ग सभी वर्गो

को विद्या और संगीत का ज्ञान देते थे। इस प्रकार संगीत पर पूर्ण अधिकार ब्राह्मणों का ही हो गया था। इस काल में संगीत का उद्‌गम् यज्ञों के द्वारा हुआ तथा यज्ञों के द्वारा ही संगीत का सम्वर्धन तथा पोषण हुआ।

इस काल में स्त्रियाँ भी गायन, वादन एवं नृत्य कला में जमकर भाग लिया करती थी। इस काल में मुख्य रूप से स्त्रीयाँ वीणा वादन में भाग लिया करती थी। स्त्रीयॉ किसी भी संगीत सम्मेलन में बंहिचक भाग लिया करती थी। स्त्रीयों के द्वारा गायन, वादन एवं नृत्य प्रस्तुति गर्व की बात थी उन्हें समाज में इज्जत की दृष्टि से देखा जाता था। वैदिक काल में विद्वानों का कहना है कि कलाकारों का चरित्र बड़ा ही उच्च कोटि का था वो किसी भी प्रलोभन में फसते नहीं थे वो संगीत को पूजा मानते थे एवं उसकी पवित्रता के साथ कोई समझौता नहीं करते थे संगीत साधना के लिए वे बड़े से बड़े आकर्षण का त्याग करने को सदा तैयार रहते थे। वैदिक काल में गायन, वादन एंव नृत्य के मिश्रतयथेष्ट भूमि उनके द्वारा तैयार की गई। इस काल में स्त्रियों द्वारा खुली जगह पर नृत्य का आयोजन किया जाता था इन सभाओं में वे बेहिचक भाग लेती थी उन पर कोई दबाव नहीं रहती थी। इस काल में समूह नृत्य जिसमें स्त्री एवं पुरूष दोनों भाग लेते थे, इस काल की विशेषता थी। अश्वमेद्य यज्ञों में मनोरंजन के निमित गाथा, गान तथा वीणा आदि वाद्धों का वादन किया जाता था। शतपथ ब्राह्मण के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि गायन में प्रवीण कलाकार उच्च कोटि के वादक एंव प्रबंधकार भी हुआ करते थे, स्त्रियाँ उन कलाकारों की ओर ही आकर्षित होती थी जो उच्च कोटि के कलाकार हुआ करते थे। उच्च कोटि की स्त्रियाँ जहाँ गायन, वादन की शिक्षा लेती थी वही निम्न जाति की स्त्रियाँ लोकनृत्य में प्रवीण हुआ करती थी।

आर्यो ने संगीत की पवित्रता में कोई कमी नहीं आए इसे धर्म से जोड़ दिया, धर्म की चादर में सगीत को लपेटकर दोनों का एकीकरण कर दिया। यही कारण है कि संगीत कभी नैतिकता से नीचे नहीं आई और कलाकार भी नैतिकता के उच्च शिखर से नीचे नहीं आए। आर्यो के जीवन का कोई भी भाग ऐसा नहीं था जो संगीत से जुड़ा न हो भगवान की उपासना का उनका एक मात्र साधन संगीत ही था।

वैदिक काल में ऋषिमुनि यज्ञ करते समय वेदों के रिचाओं का गान किया करते थे, सामगान कुशल ऐसे कुछ ऋषियों के कुल एवं घराने इसके लिए प्रसिद्ध थे। अंगिरशा ऋषि का कुल सामगान कुशल था। ऐसा ऋगवेद में लिखा है। चारो वेद ऋगवेद, यजुर्वेद, सामवेदन, अर्थवेद इन चारों वेदों का पठन करते समय उदात्त, अनुदात्त, स्वरित एवं प्रच्येत इन चार स्वर का उपयोग करना होता है।

तालों का उच्चारण अवयव में सबसे बड़ा स्थान है

उदात–प्रयत्नों से प्रेरित होकर जब वायु हमारे कंठ तालू से टकराकर ध्वनि उत्पन्न करती है। स्वर उत्पन्न करती है तो वह स्वर उदात्त स्वर कहते है।

अनुदात्त– उसी प्रकार तालु के नीचले भाग से उच्चारित स्वर अनुदात्त कहलाते है।

स्वरित – उदात् व अनुदात्त के वर्ण धर्म से मिलकर उच्चारित स्वर स्वरित कहलाता है।

प्रच्येत – वेद पाठ विधि में एक प्रकार का स्वर जिसके उच्चारण के विद्यान के अनुसार पाठक को अपना हाथ नाक के पास ले जाना होता है। इस प्रकार उत्पन्न होने वाला स्वर प्रत्येत् कहलाता है। वैदिक साहित्य में ऋंग, यजु व साम ऐसे तीन वेद या प्रकार है, ये तीनों वेदों में पहले दो वेद ऋगवेद और यजुर्वेद पढ़ने योग्य है तथा साम वेद पढ़ने एवं गाने योग्य ऐसे दो रूपों वाला है। इसका पठन रूप गौण है एवं गेय रूप मुख्य है। संसार में सबसे प्राचीन संगीत सामवेद में मिलता है। उस समय स्वर को यम कहते थे। वैदिक काल में तीन स्वरों का गान सामिक कहलाता है। इस काल में तीन स्वरों से ही गान होता था यज्ञों में देवताओं का अहवान करने के लिए सामगायन के द्वारा मुख्य रूप से होती थी ऋचाओं के द्वारा मुख्य देवताओं को हमी प्रदान करना और सामगायन के द्वारा उनको पुनः स्तबन करना इस प्रकार से यज्ञ अनुष्ठान की विधि की जाती थी, जिस यज्ञ में सामगायन नहीं वह यज्ञ ही नहीं ऐसा भी कहा गया है।

भगवत गीता के अनुसार वेदों में सामदेव ''वही मैं हूँ'' ऐसा कहकर भी श्री कृष्ण ने सामदेव का श्रेष्ठ तत्व स्वमुख से व्यक्त किया है। वैदिक काल में तीन स्वरों का गान सामिक कहलाता था। सामिक शब्द से ही जान पड़ता है कि पहले साम तीन स्वरों में गया जाता है ये स्वर आज के गंधार, रिषभ एवं षड्ज जैसे थे, धीरे–धीरे गान चार, पाँच, छः एवं सात स्वरों की होने लगी। छः एवं सात स्वरों के साम बहुत कम मिलते है। अधिक्तर साम तीन से पाँच स्वरों के ही मिलते है। साम गान की अपनी विशिष्ट स्वरलिपि है। संगीतकला के अंतर्गत परवर्ती संगीत परम्परा में उपर्युक्त तीनों ही तत्व परिगणित किये गए है। साम को विभिन्न स्तोभों द्वारा गाया जाता था। इन स्तोभों से युक्त एवं रहित दोनों प्रकार से साम गाया जाता था। साम के कई प्रकार प्रचलित थे। जिनमें ''वर्षा–हार'' साम भी एक प्रचलित प्रकार था। साम गायन स्तुति रूप में भी होता था, जैसे सूर्य, अग्नि की स्तुति साम स्त्रोतों द्वारा की जाती थी ऐसी मान्यता थी। साम गायन में देवी शक्ति का निवास माना जाता था। वैदिक काल में सामगायन में वादन की संगति के साथ की गायन होता था। दोनों की संगति वाले संगति वाद्यों चथा तंत्री, (तत्) सुषिर एवं अवनद्ध वाद्यों का वादन होता है। सोमस्तुति के अवसर पर यज्ञगृह में बाण नामक वाद्य के साथ तदनुरूप गायन होता था। यज्ञों के अवसर पर उद्गाताओं की पत्नियाँ भी गायन की संगति विभिन्न वीणाओं द्वारा करती थी। वीणा गाथी संज्ञा जो वैदिक साहित्य में अनेक स्थलों पर प्रयुक्त की गई है।

वीणा वादन ब्राह्मण एवं क्षत्रिय दोनों करते थे वीणा गाथी ब्राह्मण एवं क्षत्रिय दोनों की उपस्थिति आवश्यक मानी गई थी अन्यथा स्पष्ट कहा गया था कि यदि दोनों में से किसी एक का गायन होगा तो क्रमशः क्षत्र एवं ब्रह्म उनसे दूर चला जाएगा। दोनों गायन तो एक साथ करते थे लेकिन उनकी विषय–वस्तु भिन्न–भिन्न होती थी। जब ब्राह्मण गायक यज्ञकर्ता की प्रशस्ति का गायन करता था तब उसकी रचना की विषय वस्तु यज्ञ से संबंधित होती थी। इसके विपरीत जब क्षत्रिय गायन करता था तो उसकी रचना की विषय वस्तु यज्ञकर्ता की युद्ध एवं विजय की सफलताओंसे संबंधित होती थी इस काल में सामसंगीत के अतिरिक्त कुछ अन्य भी उल्लेख प्राप्त होता है जिसे साम गायन के अंतर्गत नहीं रखा जा सकता।

इस प्रकार के गायन के अंतर्गत गाथा, नाराशंसी, उक्थआदि का उल्लेख आता है जो प्रशस्ति गायन के अनुरूप थे। गाथा एवं नाराशंसी वैदिक यज्ञों के इतने अभिन्न अंग बन चुके थे कि उनका गायन बड़े–बड़े महत्वपूर्ण यज्ञों में होता था,

अश्वमेघ यज्ञ के दिन जब घोड़े को छोड़ा जाता था ''वीणा गणगिन'' गाथा का गायन करते थे।

इस प्रकार यह निष्कर्ष निकालना अस्वाभाविक न होगा की वैदिक काल में संगीत की स्पष्ट ही दो धाराएँ प्रचलित थी प्रथम साम संगीत एवं द्वितीय सामेत्तर जिसके अंतर्गत गाथा, नाराशंसी इत्यादि को रखा जा सकता है।

साम गायन पूर्णतः धार्मिक प्रतीत होता है, उसकी विषय वस्तु देवस्तुति संबंधी ऋचाएँ थी, जबकि सामेत्तर संगीत की विषय वस्तु सामान्यतः प्रशस्तियाँ प्रतीत होती है। जो जन साधारण के कुछ निकट प्रतीत होता है। वैदिक काल में वीणाओं के भिन्न–भिन्न प्रकारों का वर्णन किया गया है जैसे–वाणवीणा, कर्करि, काण्डवीणा, अपघाटिला, गोद्यावीणा आदि।

''बाण'' नामक तंत्री वाद्य वैदिक काल का सर्वाधिक प्रचलित एवं महत्वपर्ण प्रकार था। इसे ''महावीणा'' की संज्ञा भी दी गई है। इस वीणा की विशेषता इसमें लगे 100 तारों से हुई जिसकी तुलना पुरूष की सौ वर्ष की आयु से की गई है। वैदिक काल में अनवद्ध वाद्यों मे दुन्दुभि, भूमिदुन्दुभि प्रचलित वाद्य था। दुन्दुभि का वादन दण्ड से किया जाता है। यह दण्ड ''आहनन'' कहलाता था। वीरों को उत्साहित करने के लिए दुन्दुभि का प्रयोग होता था।

सुषिर वाद्यों के अन्तर्गत वेणु का महत्वपूर्ण स्थान है। वैदिक काल में गायन, वादन एवं नृत्य इन तीनों तत्वों का यथेष्ट प्रचार था। संगीत कला को ''शिल्प'' के रूप में भी उल्लिखित किया गया है। वैदिक में लौकिक संगीत का कही भी उल्लेख नहीं मिलता प्रत्येक उल्लेख का संदर्भ ही मिलता है।

सन्दर्भ :–

1. शर्मा डॉ0 मृत्युंजय, त्रिपाठी राम नारायण, संगीत मैनुअल, पृ0–84–89
2. टाक सिंह डॉ0 तेज, सुबोध संगीत शास्त्र पृ0–2
3. शर्मा भगवत शरण, भारतीय संगीत का इतिहास–14
4. शर्मा भगवत शरण, भारतीय संगीत का इतिहास–66
5. सिंह, डॉ0 ठाकुर जयदेव भारतीय संगीत का इतिहास पृ0–106